संस्कृत साहित्य सौरभ

नैषध-चरित

संस्कृत-साहित्य-सौरभ

३४

श्रीहर्ष-कृत

नैषध-चरित

श्रीधर प्रसाद पंत
द्वारा
कथासार

विष्णु प्रभाकर
द्वारा
सम्पादित

१९५९

सत्साहित्य प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

पहली बार : १९५९
मूल्य
सैंतीस नये पैसे

मुद्रक
हिंदी प्रिंटिंग प्रेस
दिल्ली

संस्कृत-साहित्य-सौरभ

हमारा संस्कृत-साहित्य अत्यंत समृद्ध है। भारतीय जीवन का शायद ही कोई ऐसा अंग हो, जिसके संबंध में मूल्यवान सामग्री का अनन्त भंडार संस्कृत साहित्य में उपलब्ध न हो। लेकिन खेद की बात है कि संस्कृत से अपरिचित होने के कारण हिंदी के अधिकांश पाठक उससे अनभिज्ञ हैं। उनमें जिज्ञासा है कि वे उस साहित्य से परिचय प्राप्त करें; परन्तु उसका रस वे हिन्दी के द्वारा लेना चाहते हैं।

पाठकों की इसी जिज्ञासा को देखकर बहुत समय पहले हमने विचार किया था कि संस्कृत के महाकवियों, नाटककारों आदि की प्रमुख रचनाओं को छोटी-छोटी कथाओं के रूप में हिन्दी में प्रस्तुत करें। इस विचार को इस माला द्वारा मूर्त्त रूप दिया जा रहा है।

इस पुस्तकमाला से हिन्दी के सामान्य पाठक भी लाभ उठा सकें, इस-लिए पुस्तकों की भाषा बहुत सरल बनाने का प्रयत्न किया गया है। पाठकों की सुविधा के लिए टाइप भी मोटा लगाया गया है।

इन पुस्तकों का संपादन हिन्दी के सुलेखक श्री विष्णु प्रभाकर ने बड़े परिश्रम से किया है।

इस माला में कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। कई आगे निकलेंगी। आशा है, हिन्दी के पाठकों को इन पुस्तकों से संस्कृत-साहित्य की महान् रचनाओं की कुछ-न-कुछ झांकी अवश्य मिल जायगी। पूरा रसास्वादन तो मूल ग्रंथ पढ़-कर ही हो सकेगा। यदि इन पुस्तकों के अध्ययन से मूल पुस्तकें पढ़ने की प्रेरणा हुई तो हम अपने परिश्रम को सफल समझेंगे।

—मंत्री

भूमिका

संस्कृत-साहित्य के तीन सबसे श्रेष्ठ महाकाव्यों में 'नैषध' की भी गिनती है। वह काव्य-साहित्य का चमकदार हीरा और पंडितों के गले का हार माना जाता है। कल्पना की ऊंची उड़ान, नारी और प्रकृति के सुंदर-सजीव वर्णन में यह महाकाव्य समानता नहीं रखता। अलंकारों का जैसा सुंदर प्रयोग 'नैषध' में हुआ है वैसा और कहीं हुआ होगा, इसमें संदेह है, विशेषकर अतिशयोक्ति का। भाषा पर लेखक को पूरा अधिकार है। उचित शब्द जैसे आप ही-आप जुटे चले आते हैं।

'नैषध' में निषध देश के राजा नल और विदर्भ की राजकुमारी दमयंती के प्रेम और विवाह का वर्णन किया गया है। हंस का दूत-कार्य, दमयंती का स्वयंवर, उसमें देवताओं का नल का रूप धरकर आना, दमयंती का नल को पहचानना, विवाह, फिर देवताओं और कलि का वाग्युद्ध, कलि का नल से बदला लेने की प्रतिज्ञा करना—संक्षेप में नैषध की कथा इतनी ही है, पर यह वर्णन इतना विस्तृत, साथ ही इतना मार्मिक और मनोहारी है कि 'नैषध' काव्यों का अलंकार माना जाता है।

संस्कृत के अन्य कवियों की तरह 'नैषध' के रचयिता महाकवि श्रीहर्ष के जीवन का वृत्तांत अंधकार में नहीं छिपा है। वह कन्नौज-नरेश विजयचंद्र और जयचंद्र के सभा पंडित थे। उनका समय बारहवीं शताब्दी का उत्तर-काल है। उनके पिता हरि पंडित और माता मामल्लदेवी थीं। हरि पंडित को किसी पंडित ने पराजित किया था। पिता की आज्ञा से श्रीहर्ष ने बाद में विजयचंद्र की राज्यसभा में जाकर उस पंडित को पराजित किया था। राजा जयचंद्र के कहने पर ही उन्होंने 'नैषधीय-चरित' की रचना की। उनके बनाये आठ और ग्रंथ हैं। वह जितने बड़े कवि थे, उतने ही बड़े दार्शनिक, साधक और योगी भी थे।

'नैषध' इतना लोक-प्रिय महाकाव्य है कि उसकी रचना के सौ वर्ष के भीतर ही बड़े-बड़े विद्वानों ने उसपर टीकाएं लिखीं।

—**संपादक**

नैषध-चरित

: १ :

बहुत पहले की बात है। भारतवर्ष में निषध नाम का एक बड़ा समृद्ध देश था। वहां के राजा का नाम नल था। वह जितने शूर, वीर और विद्वान थे उतने ही सुंदर भी। उनके राज्य में प्रजा बड़ी सुखी थी। कोई भी दुःखी या दरिद्र न था। सभी लोग चैन से रहा करते थे।

इधर विदर्भ देश में भीम नाम के बड़े प्रतापी राजा राज्य करते थे। उन्होंने दमन नाम के महर्षि की बड़ी सेवा की थी। उनके आशीर्वाद से दम, दांत, दमन नाम के तीन पुत्र और दमयंती नाम की एक सुंदरी कन्या उत्पन्न हुई थी। नल यदि संसार के सर्व-श्रेष्ठ मनुष्य थे तो, दमयंती सर्वश्रेष्ठ सुंदरी। सारे भारत में लोग उसकी प्रशंसा किया करते थे। राजकुमारी दमयंती के रूप-गुण की चर्चा सुनकर राजा नल मन-ही-मन उससे प्रेम करने लगे। यहांतक कि कभी-कभी उसकी याद में वह व्यग्र भी हो जाया करते थे।

जब बहुत प्रयत्न करने पर भी उनका मन शांत नहीं हुआ तो वेग से चलनेवाले एक रथ पर बैठकर वह अपने सुंदर उपवन में पहुंचे। सुहावना समय था। चारों ओर प्रकृति की सुषमा बिखरी हुई थी। फूल खिल रहे थे। कोयल कूक रही थी। भ्रमर गूंज रहे थे। दिन की धूप चांदनी की तरह सुखदायी थी, परंतु चंचल मनवाले नल का किसी भी वस्तु से मनोरंजन न हो सका। उसी बगीचे में एक सुंदर सरोवर था, जिसमें विविध रंगों के अनेक कमल खिले हुए थे। तभी राजहंसों की एक टोली वहां आकर उतरी। कुछ देर तक तो नल उनकी मनोहारी क्रीड़ा को देखते रहे। फिर यकायक उनके मन में आया कि क्यों न किसी हंस को पकड़कर मन बहलाया जाय। बस, फिर क्या था। वह उसी ओर लपके, जिस ओर एक हंस अपने मुंह को पंखों में छिपाकर सो गया था। उसके पंख सुनहरे कमल के समान थे। नल ने उसे पकड़ लिया।

पकड़े जाने पर उस किशोर हंस ने छूटने का बहुत प्रयत्न किया। चिल्ला-चिल्लाकर वह नल के दोनों हाथों में काटने लगा। परंतु जब उसका कोई वश न चला तब वह राजा नल को संबोधित कर मनुष्यों की तरह बोला, "हे राजन्, इतना वैभव होते हुए भी मेरे

पंखों के लोभ से आप मुझे मारना चाहते हैं। मेरे इन तुच्छ पंखों से न तो आपका कोष भर सकता है और न ही कीर्ति फैल सकती है। फिर मुझ निरीह पक्षी की हत्या से आपको क्या लाभ होगा ? आप शूरवीरों के साथ युद्ध करने में असमर्थ मुझे सताते हैं। यह अनुचित है।

"मुझे मारने से पहले आप मेरी बूढ़ी माता, युवा पत्नी, और छोटे-छोटे बच्चों का भी तो कुछ विचार कीजिये। मेरे मर जाने पर उनका पालन-पोषण कौन करेगा ? वे मेरी राह देख रहे होंगे। जब मेरे साथी मेरी मृत्यु का समाचार उन्हें सुनायंगे, तब उनकी क्या हालत होगी।

"हे विधाता ! कमल नाल से उत्पन्न होने पर भी तुम बड़े निर्दय हो। तुमने अपने कमल-कोमल हाथों से मेरी पत्नी को उत्पन्न किया है। पर यह तो बताओ कि तुम्हारे उन्हीं हाथों से हमारे दारुण वियोग की निष्ठुर भाग्यलिपि कैसे लिखी गई ? मेरे बच्चों ने तो अभी आंखें भी नहीं खोली हैं, वे भोजन की आशा से मेरी राह देख रहे होंगे। परंतु अब तो वे भूख-प्यास से तड़प-तड़पकर, चूं-चूं करते हुए, मर जायंगे।"

ऐसा कहते-कहते हंस मूर्च्छित हो गया। उसके दारुण विलाप को सुनकर राजा नल को अपने कृत्य पर बड़ा

पश्चात्ताप हुआ। उन्होंने उसे छोड़ दिया। उनकी आंखों से इतने आंसू गिरे कि हंस को होश आ गया। होश में आते ही अपनेको मुक्त देखकर हंस बड़ा प्रसन्न हुआ। वह फिर अपनी मंडली में जा बैठा। उसको देखकर दूसरे हंसों ने भी बड़ी प्रसन्नता प्रकट की।

परंतु कुछ देर बाद क्या हुआ। वही हंस जो पकड़े जाने पर रो-रोकर मूर्च्छित हो गया था अब अपने-आप राजा नल के हाथ में आकर बैठ गया और उनकी प्रशंसा करता हुआ मीठी वाणी में कहने लगा--"हे राजन्, आपकी आकृति जितनी सुंदर है उतना ही उदार और कोमल आपका हृदय भी है। मुझे मुक्त करके आपने जो कृपा की है, उसके लिए मैं आपका आभारी हूं। उस समय अनेक कटु वाक्य कहकर मैंने आपको कष्ट पहुंचाया था। परन्तु अब मैं आपका कुछ प्रिय कार्य करके अपने उस अपराध का प्रायश्चित्त करना चाहता हूं। कृपाकर मेरे वचन सुनें--

"विदर्भ देश में भीम नामक बड़े प्रतापी राजा राज्य करते हैं। उनकी पुत्री दमयंती साक्षात लक्ष्मी के समान सब गुणों से युक्त अत्यंत सुंदरी है। उसके सौंदर्य के सामने चंद्रमा भी मलिन पड़ जाता है। वह दमयंती केवल आपकी ही महारानी होने योग्य है।

उसके बिना, हे वीर, आपका यह समस्त वैभव व्यर्थ-सा प्रतीत हो रहा है। इसलिए अब मैं दमयंती के पास जाकर आपकी प्रशंसा करूंगा, जिससे वह आपकी ओर आकर्षित होगी।" इतना कहकर हंस चुप हो गया।

हंस को दमयंती की प्राप्ति में सहायक समझकर, उसके शरीर को अपने कोमल हाथों से सहलाते हुए राजा नल ने उससे कहा, "हे हंस, तुम्हारा शरीर ही सुवर्णमय नहीं है, बातचीत करने में भी तुम बड़े चतुर हो। तुमने अभी जो दमयंती के रूप-गुणों का वर्णन किया है उससे मैं उसको स्वयं देखा हुआ-सा मान रहा हूं। वास्तव में मैं हृदय से दमयंती को चाहता हूं। उसके बिना मुझे यह सुगन्धित पवन, आह्लादकारी चंद्रमा, पुष्प, बन, बाग आदि सभी चीजें दुखदायी प्रतीत हो रही है। अब तुम्हीं मुझे दमयंती की प्राप्ति करा सकते हो। तुमसे अधिक कहना व्यर्थ है, क्योंकि सज्जन लोग बिना कहे ही परोपकार किया करते हैं। तुम दमयंती के पास जाओ। तुम्हारा मार्ग मंगलमय हो।"

: २ :

इसके बाद नल से विदा होकर हंस विदर्भ देश को चला गया। वहां पहुंचकर कुछ देर तक तो दिव्य नगरी कुंडिनपुरी की शोभा देखता रहा, फिर दमयंती के क्रीड़ा-

उपवन में उतर गया।

अत्यंत सुकुमार उस सुवर्णमय हंस को देखकर दमयंती उसे पकड़ने का लोभ संवरण न कर सकी। इशारे से ही सब सखियों को वहीं रहने का आदेश देकर वह धीरे-धीरे हंस को पकड़ने के लिए चली। परंतु ज्योंही वह उसके पास पहुंचने का प्रयास करती, त्योंही वह थोड़ा उड़कर और आगे बढ़ जाता। इस तरह खेल-खेल ही में वह दूर एक लता-कुंज में चला गया। पीछा करती हुई दमयंती भी वहीं जा पहुंची। उसे थकी हुई समझकर हंस उससे मनुष्यों की बोली में बोला, "अयि दमयंती ! बड़ी हो जाने पर भी अभी तुम्हारा बचपन नहीं छूटा। तुम चाहे कितनी ही दूर क्यों न चली आओ, पर मुझे न पकड़ सकोगी। भगवान ब्रह्मा की आज्ञा से हम लोग महाराज नल का क्रीड़ा-सरोवर देखने को आये थे।

"मैंने वहां राजा नल को देखा है, जो साक्षात सौंदर्य की प्रतिमा हैं। उनका ऐश्वर्य अपार है। संसार के सत्पुरुषों में उसका प्रमुख स्थान है। उनके अनुपम रूप-लावण्य को देखकर अप्सराएं भी मोहित हैं। उनमें अनंत गुण हैं, जिनके कारण सारे संसार में उनका यश फैला हुआ है। अधिक क्या कहूं। वह वास्तव में तुम्हारे योग्य

वर हैं। तुमको उनके साथ ही विवाह करना चाहिए। रात्रि और चंद्रमा के संगम के कारण ऐसा संभव भी है।"

हंस की बात सुनकर दमयंती बड़ी प्रभावित हुई। उससे अपनी धृष्टता के लिए क्षमा मांगती हुई कहने लगी, "हे हंस, बाल-स्वभाव के कारण तुम्हें पकड़ने की चेष्टा कर मैंने जो तुम्हें कष्ट दिया है, उसके लिए मुझे क्षमा कर दो। पर मैं तो अभी कन्या हूं। विवाह की बात कैसे कर सकती हूं।" पर जब हंस ने उसे विश्वास दिलाया तो वह प्रसन्न होकर बोली, "मैं महाराजा नल को बहुत चाहती हूं। उनके अतिरिक्त अन्य किसी व्यक्ति से विवाह न करूंगी--यह मेरा दृढ़ निश्चय है। तुम राजा नल को मेरे साथ विवाह करने के लिए राजी कर दो--यही मेरा सबसे अधिक प्रिय कार्य होगा। अधिक क्या कहूं? नल के बिना मेरा जीवित रहना असंभव है, इसलिए तुम नल को मुझे देकर कृतार्थ करो। यद्यपि मैं तुम्हारा कोई प्रत्युपकार नहीं कर सकती, परंतु आजीवन तुम्हारा गुणगान तो करूंगी ही।

"हां देखो, अवसर देखकर कार्य करना। जिस समय वह क्रुद्ध हों या किसी काम में लगे हों उस समय उनसे मेरी बातचीत मत करना।"

दमयंती को राजा नल में अनुरक्त समझकर, हंस

बोला, "हे राजकुमारी ! यदि वास्तव में तुम राजा नल से प्रेम करती हो तो अब मुझे इसमें कुछ भी नहीं करना पड़ेगा; क्योंकि वह तो तुम्हारे लिए पागल हैं ही। तुम्हें पाकर अब वह सचमुच धन्य हो जायंगे। तुम्हारा कल्याण हो, तुम दोनों चिरकाल तक सुखी रहो। अब मुझे आज्ञा दो। मैं राजा नल के पास जाऊंगा।" यह कहकर हंस नल के पास चला गया।

उधर राजा नल तो दमयंती का संवाद जानने के लिए उत्सुक हो ही रहे थे। हंस को देखते ही बड़े प्रसन्न हुए और उससे बार-बार दमयंती का कुशल संवाद पूछने लगे। हंस भी बार-बार सुनाने लगा।

इधर हंस के चले जाने के बाद दमयंती की अवस्था बड़ी विचित्र हो गई। उसका हँसना-खेलना बंद हो गया। उसे कोई भी चीज अच्छी नहीं लगती थी। हर समय खोई-खोई-सी रहती। धीरे-धीरे उसका उन्माद बढ़ गया और वह बे-सिर-पैर की बातें करने लगी। फिर बेहोश हो गई। इसकी सूचना राजा भीम को मिली। वह तुरंत प्रधान मंत्री और राजवैद्य को साथ लेकर दमयंती के महल में आये। वहां उसकी हालत देखकर उन्होंने शीघ्र ही एक विशाल स्वयंवर करने का निश्चय किया।

उस स्वयंवर में देश-देशांतर के सभी राजाओं को आमंत्रित किया गया। महर्षि नारद के मुंह से राजकुमारी दमयंती के स्वयंवर का समाचार सुनकर देवराज इंद्र भी अग्नि,वरुण और यम के साथ उसमें भाग लेने चले। उन्होंने गुप्त रूप से अपनी दूतियां दमयंती के पास भेजीं। महाराज भीम के पास भी बहुमूल्य उपहार भेजे। संयोग-वश मार्ग में उनकी भेंट महाराज नल से हो गई। उनके अनुपम रूप-लावण्य को देखकर अग्नि आदि लोकपाल तो दमयंती को पाने की आशा छोड़ बैठे, किंतु देवराज निराश न हुए। परिचय के उपरान्त बड़ी नम्रता से नल से बोले, "राजन्, हमें आपसे एक महत्वपूर्ण कार्य कराना है। आपकी स्वीकृति मिलने पर हम आपको अपना काम बताएंगे।" राजा नल भला देवराज इंद्र की बात कैसे टालते। उन्होंने तुरंत स्वीकृति दे दी।

"तो आप हमारी ओर से दमयंती के पास दूत बन-कर जाइये और उसे हम चारों में से किसी एक को वरण करने के लिए राजी कीजिये।" गंभीर स्वर में कुटिल इंद्र बोले। नल सबकुछ समझ गये। पहले तो उन्होंने मना किया, परंतु देवताओं के फिर आग्रह करने पर मान गये। वह वचन-बद्ध भी तो थे। फिर चंद्रवंशी थे। इसलिए उन्होंने दूत बनना स्वीकार कर लिया।

देवराज इंद्र ने उन्हें इच्छानुसार अदृश्य हो जाने का वरदान देकर प्रेमपूर्वक विदा किया।

: ३ :

वहां से नल सीधे दमयंती के महल में गये। इंद्र के वरदान के प्रभाव से असंख्य पहरेदारों ने भी उन्हें महल में जाते हुए नहीं देखा। दमयंती उस समय अपनी मां के पास गई हुई थी। कुछ देर बाद जब वह लौटी तब तक इंद्र, वरुण, अग्नि और यम की दूतियां भी वहां पहुंच चुकी थीं। वे तरह-तरह की बातें करके चारों लोकपालों में से किसी एक का वरण करने को कहने लगीं। परंतु दमयंती पर उनका कोई प्रभाव न पड़ा। उसने स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि वह राजा नल के अतिरिक्त किसी दूसरे पुरुष का वरण न कर सकेगी।

राजकुमारी के इस दृढ़ निश्चय को जानकर नल के हृदय में आशा का संचार होने लगा और दूतियों के लौट जाने पर उसको बड़ी प्रसन्नता हुई। बहुत देर तक वह निर्दोष रूपवाली दमयंती को देखते ही रहे। फिर अवसर पाकर उसके सामने प्रकट हो गये।

एक अपरिचित तेजस्वी पुरुष को सहसा अपने सामने देखकर दमयंती और उसकी सखियां आश्चर्य में पड़ गईं। उसके तेज से हतप्रभ-सी होकर बिना कुछ

कहे-सुने ही सभी अपने-अपने आसनों से उठ खड़ी हुईं। दमयंती पहले तो कई क्षण सानुराग दृष्टि से नल के रूप को निहारती रही। फिर कुछ देर बाद साहस करके उसने नल का शिष्टतापूर्वक राजकीय सत्कार किया। उनको देखकर उसे संदेह हो गया था कि कहीं ये राजा नल तो नहीं हैं। उसके मनोभावों को समझकर नल बोले, "हे राजकुमारी, अधिक जानकर क्या करोगी? बस, इतना ही समझ लो कि मैं इस समय इंद्र, यम, वरुण और अग्नि का दूत बनकर तुम्हारे पास आया हूं। तुम्हारे रूप, गुण, शील आदि से आकर्षित होकर वे तुमसे विवाह करने के लिए यहां आये हुए हैं। वे तुमसे आंतरिक प्रेम करते हैं। इसलिए अब तुम उनमें से किसी एक लोकपाल को वरण कर उन्हें कृतार्थ करो। ऐसा करने से मेरा दूतपन भी सफल हो जायगा।"

दमयंती नल की सारी बातें ध्यानपूर्वक सुनती रही, फिर बोली, "मैंने आपसे आपके कुल और नाम के बारे में पूछा था। आप देवताओं का संदेश सुनाने लगे। इन व्यर्थ की बातों को छोड़कर जो पूछा है वह बताइये।" नल यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। बोले, "दमयंती, मैं दूसरे का दूत बनकर आया हूं। यह अच्छा काम नहीं है, इसलिए मैं अपना नाम और वंश

नहीं बतलाता। आप यह आग्रह छोड़कर दिक्पालों के संदेशों का उत्तर दें।"दमयंती की शंका अभी शांत नहीं हुई। वह बोली, "आप जबतक नाम नहीं बता देंगे तबतक उत्तर नहीं मिलेगा।" नल को अब तो अपना कुछ परिचय देना पड़ा। तब दमयंती ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया, "हे आर्य, आपने अपना कर्तव्य पूरा कर दिया। अब मेरा निवेदन भी सुन लीजिये। मैंने तन, मन, धन से राजा नल को पति रूप में वरण कर लिया है। उनके अतिरिक्त दिक्पालों को तो क्या साक्षात् विष्णु को भी वरण नहीं कर सकती। फिर, मैं तो एक तुच्छ मानवी हूं, देवताओं के लिए तो देवी ही होनी चाहिए। इसलिए उन्हें मेरा विचार छोड़ देना चाहिए। यदि इंद्रादि के अनुरोध या बल-प्रयोग के कारण राजा नल मुझसे विवाह न करेंगे तो मैं निश्चय ही आत्महत्या कर लूंगी। कृपाकर आप मेरे इस दृढ़ निश्चय को इंद्रादि लोकपालों को बता दें।"

राजा नल कोई साधारण पुरुष न थे, जो केवल इतने से मान जाते। उसके हृदय की वास्तविक हालत को जानने के विचार से उन्होंने कहा, "हे राजकुमारी, तुम बड़ी भोली हो। इस प्रकार लोकपालों की प्रार्थना को ठुकराकर उनका तिरस्कार कर रही हो। देवराज

इंद्र को छोड़कर नल को वरण करने की तुम्हारी यह इच्छा तो वास्तव में उस ऊंट के समान है जो मीठे गन्ने को छोड़कर कांटेदार शमी की झाड़ी की ओर लपकता है। आत्महत्या करके देवताओं से मुक्ति पाने की जो बात अभी तुमने कही, उसको सुनकर हँसी आये बिना नहीं रहती। क्योंकि फांसी लगाकर मरने पर स्वर्ग के स्वामी इंद्र तुम्हें अवश्य ले जायंगे। फिर, उनके तो आंगन में ही कल्पवृक्ष है जो सब कुछ दे सकता है। इंद्र के मांगने पर कल्पवृक्ष तुम्हें अवश्य ही उन्हें दे देगा। आग में जलकर मरने पर तो अग्नि का मनचाहा काम पूरा हो जायगा। यज्ञ के द्वारा भी वे तुम्हें प्राप्त कर सकते हैं। पानी में डूबकर मरने पर वरुण तुम्हें अवश्य पकड़ लेंगे। और यम यदि अगस्त्य मुनि से तुम्हें मांग बैठे तो वह कभी अस्वीकार न करेंगे। और फिर लोक-पालों के रुष्ट हो जाने पर कोई काम भी तो पूरा नहीं हो सकता। मान लो, अग्निदेव रुष्ट होकर यदि नल को वरण करते समय प्रकट न हुए तो उस समय तुम्हारे विवाह का साक्षी कौन होगा? यदि कहीं यमराज रुष्ट हो गये और उन्होंने वर-वधू में से किसीको भी अपने यहां बुला लिया तो फिर विवाह कैसे होगा? वरुण तो जल के स्वामी हैं। रुष्ट होकर यदि वह जल को रोक देंगे

तो इच्छा होने पर भी तुम्हारे पिता नल को तुम्हें कैसे दे पाएंगे ? इसलिए इन चारों में से किसी एक को अपनी इच्छानुसार अवश्य वरण कर लो। इसीमें सबकी भलाई है।"

राजा नल की युक्ति-संगत बातों को सुनकर दमयंती बहुत घबड़ा गई। जोर-जोर से रोती हुई वह करुण विलाप करने लगी, "हे विधाता, नल के बिना मैं इन अधम प्राणों का क्या करूंगी। इसलिए इन्हें समाप्त कर दो। मरने पर किसीसे कोई बैर नहीं रहेगा। इसलिए दक्षिण पवन से मैं एक प्रार्थना करती हूं कि वह कृपा कर मेरे शरीर की भस्म को निषध देश में पहुंचा दें। वहां राजा नल का स्पर्श पाकर मेरी भस्म धन्य हो जायगी, मेरा जन्म सार्थक हो जायगा। हे दिक्पालो ! आप लोग कृपाकर मुझे छोड़ क्यों नहीं देते ? आप लोगों की तो इच्छा मात्र से ही मुझ जैसी करोड़ों स्त्रियां उत्पन्न हो सकती हैं।

"हे प्रियतम ! हाय, दूर होने के कारण तुम मेरी दयनीय दशा को नहीं देख पा रहे हो। ईर्ष्यालु विधाता ने उस प्यारे हंस को भी रोक लिया है। नहीं तो वह मेरी हालत जरूर तुम्हें बता देता। मालूम होते ही तुम अवश्य मुझे इस दुःख सागर से छुटकारा दिला देते।

पर इसमें तुम्हारा क्या दोष ? सब मेरे भाग्य का फल है। परंतु मेरे मर जाने के बाद यदि तुम मेरे लिए थोड़ा भी शोक प्रदर्शित करोगे तो मैं अपनेको सौभाग्यशालिनी समझूंगी। तुम मेरे जीवनाधार हो। इस जन्म में तो तुम्हें न पा सकी, परंतु जन्म-जन्मांतर में तुम्हें ही पति रूप में प्राप्त करती रहूं, यही मेरी अंतिम इच्छा है।" इतना कहते-कहते दमयंती जोर-जोर-से रोने लगी।

सामने ही प्रियतमा का दारुण विलाप सुनकर नल का भी धैर्य छूट गया। आखिर मनुष्य ही तो थे, अपने दूत-कार्य को सर्वथा भूलकर दमयंती से कहने लगे, "हे प्रिये ! बस करो, बहुत हो गया। मैं ही वह निष्ठुर नल हूं, जिसके कारण तुम्हें इतना घोर कष्ट सहन करना पड़ रहा है। इस समय तक कर्तव्य-धर्म में बंधे होने से मैंने जो कुछ कहा है—उसे तुम क्षमा कर देना। तुम्हारे नयन आंसुओं से भर गये हैं। इस कारण तुमको प्रसन्न करने के लिए अपने चरणों पर झुके हुए भी मुझको तुमने नहीं देखा। तुम और कहीं नहीं, मेरे ही हृदय सिंहासन में विराजोगी। इसलिए रोना बंद करके प्रसन्न होओ।"

लेकिन इतना कहते ही नल को अपने दूत-धर्म की

याद आ गई। वह लज्जित होकर सोचने लगे—हाय, आवेश में आकर मैंने यह क्या कर डाला। वे मुझसे क्या कहेंगे? फिर मन-ही-मन देवताओं से प्रार्थना करने लगे, "मुझे परिस्थितिवश ही अपना नाम बताना पड़ा। इसलिए कृपा कर क्षमा कर देना।"

नल को इस प्रकार दुखी देखकर हंस वहां आ पहुंचा और उन्हें सांत्वना देते हुए बोला, "आप किसी बात की चिंता न करें। दमयंती को स्वीकार करें, आपने अपना कर्तव्य पूरा किया।" इस प्रकार हंस के समझाने पर नल दमयंती से बोले, "शायद देवता लोग अपना काम बनते न देखकर मुझे दंड देंगे, तो मैं उसे सहर्ष स्वीकार कर लूंगा। परंतु अब तुम्हें अधिक दुःख न दूंगा। तुम चिंता मत करो।"

"अरे, मेरा संदेह ठीक निकला। ये ही महाराज नल हैं। इन्होंने मुझे कैसे छला, मेरी हालत देखकर ये अपने मन में क्या सोचते होंगे?" इस तरह सोचती हुई दमयंती भी बड़ी लज्जित हुई और प्रियतम के दर्शन से जो मधुर आनंद हुआ, उस कारण वह फिर राजा नल से बात न कर सकी।

उसको लज्जित देखकर उसकी सखी नल से कहने लगी, "हे राजन्! हमारी सखी आपके बिना जीवित

न रह सकेगी। वह आपसे अनन्य प्रेम करती है।" सखी की ये बात सुनकर नल ने दूसरे दिन देवताओं के ही साथ स्वयंवर में आने का वचन दिया। फिर वह लोकपालों के पास चले गये।

: ४ :

वे चारों राजा नल की प्रतीक्षा कर रहे थे। नल ने वहां पहुंचकर सारी बातें ज्यों-की-त्यों उन्हें सुना दीं। उसकी यह निश्छलता, कर्तव्य-परायणता और सत्यवादिता देखकर वे बड़े प्रसन्न हुए।

इसके बाद स्वयंवर के लिए संसार के कोने-कोने से राजा लोग आ-आकर विदर्भ देश में इकट्ठे होने लगे। उनमें जो कुलीन थे वे न्यायपूर्वक दमयंती का वरण करना चाहते थे। कुछ अकुलीन शूरवीर बल से हरण करने की इच्छा रखते थे। परंतु जो दोनों श्रेणियों में नहीं थे, वे केवल देखने के लिए आये थे। देवताओं और मनुष्यों के अलावा पातालवासी सर्पराज वासुकि भी अपने दल-बल के साथ आ पहुंचे। राजा भीम ने सबका भली-भांति आदर-सत्कार किया।

इंद्र आदि लोकपाल सुन चुके थे कि दमयंती उन्हें अस्वीकार कर चुकी है। फिर भी उन्होंने नल का रूप धारण किया। शायद नल के समान जानकर दमयंती

हममें से किसीको वरण कर ले ।

स्वयंवर क्या था---दमयंती के प्रेम की अग्नि-परीक्षा थी । एक से एक बढ़कर सुंदर राजकुमार वहां उपस्थित थे । नल भी एक की जगह पांच बैठे थे। दमयंती के बुद्धि-कौशल को देखने के लिए यक्ष, किन्नर, सिद्ध, विद्याधर, महर्षि एवं देवताओं और अप्सराओं के साथ स्वयं भगवान विष्णु भी आकाश में विराजमान हो गये । आदि कवि वाल्मीकि, देवगुरु बृहस्पति, दैत्य गुरु शुक्राचार्य आदि स्वयंवर की सुंदर रचना की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे ।

इतने अधिक राजाओं का ठीक-ठीक परिचय दमयंती को कौन दे पायेगा ? यह सोचकर राजा भीम बहुत चिंतित हो उठे । उन्होंने मन-ही-मन भगवान को याद किया । सच्ची पुकार सुनते ही उसी समय भगवान ने देवी सरस्वती को वहां भेज दिया । राजा भीम ने सरस्वती की सम्मानपूर्वक पूजा की ।

इसके पश्चात स्वयंवर प्रारंभ हुआ । ठीक समय पर हाथों में वरमाला लिये हुए सरस्वती के साथ दमयंती ने वहां प्रवेश किया । उस समय लाखों आंखें एक साथ दमयंती की रूप-सुधा का पान करने लगीं । उसके सौंदर्य से हतप्रभ से होकर सभी लोग मुक्त कंठ से प्रशंसा

करने लगे। उन्होंने सोचा कि यह ब्रह्मा की रचना नहीं हो सकती । इसे तो स्वयं कामदेव ने बनाया है ।

देवों, राक्षसों, विद्याधरों तथा गंधर्वों—यक्षों के पास होती हुई दमयंती नागराज वासुकि के पास पहुंची । सरस्वती उनका परिचय देती हुई कहने लगी, "हे दमयंती ! ये नागराज वासुकि हैं। इन्होंने चंद्रमौलि भगवान शंकर की सेवा में ही अपना जीवन समर्पित किया है । शंकर भी इनका बड़ा संमान करते हैं। कभी वह अपने धनुष पिनाक की प्रत्यंचा के रूप में इनका उपयोग करते हैं तो कभी इनके कोमल कलेवर का कंकण बनाकर अपने हाथों में पहन लेते हैं । आज ये तुम्हारे प्रार्थी बनकर यहां आये हुए हैं। यद्यपि इनके दांतों में विष रहता है, लेकिन ये शंकरजी के जटाजूट पर विराजमान चंद्रमा के अमृत का भी पान किया करते हैं, जिससे इनके विष का कोई प्रभाव नहीं पड़ता । अतः इनसे तुम भयभीत मत होना।"

परंतु दमयंती पर कोई प्रभाव पड़ते न देखकर वह उसे क्रमशः पुष्कर, शाके, कौश्री, कुश, शाल्मली, प्लक्ष एवं जंबू द्वीपाधिपों तथा अवंति, गौड़, मथुरा, वाराणसी अयोध्या, पांडच, महेंद्रभूमि, कांचीपुरी, नैपाल, मालय, मिथिला, कामरूप, उड़ीसा एवं मगध के राजाओं के पास

ले गई। उन्होंने प्रत्येक राजा के रूप, गुण, पौरुष और कुल का बखान करके उनका विस्तृत परिचय दिया। लेकिन जब दमयंती ने इनकी ओर दृष्टि उठाकर भी न देखा तब वह उसे वहां ले गई, जहां नल वेशधारी चारों लोकपाल एवं स्वयं राजा नल बैठे हुए थे। नल को देखकर दमयंती बड़ी आनंदित हुई।

लेकिन वहांपर तो एक साथ पांच नल बैठे हुए थे। यह देखकर वह बड़े चक्कर में पड़ गई और जब देवी सरस्वती ने क्रमशः इंद्र, अग्नि, यम, वरुण की जो समान प्रशंसा की तो सुंदरी दमयंती एकबारगी घबड़ा गई। यह उसकी बुद्धि की परीक्षा ली जा रही थी। वह सोचने लगी—इनमें वास्तविक नल कौन है। पांच नल तो हो नहीं सकते। हो-न-हो यह लोकपालों के प्रस्ताव को ठुकराने का ही परिणाम है। वे अब अपनी माया से धोखे में डालकर मुझे वरण करना चाहते हैं। यह सोचते-सोचते वह बड़ी चिंतित हो गई कि किस प्रकार असली नल को पहचानकर उनका वरण करे। कामधेनु मेरी सहायता नहीं कर सकती। देवी सरस्वती से प्रार्थना करूं तो उन्हें देवों का शत्रु बनना होगा।

जब बहुत देर तक उसे कोई उपाय न सूझा तब उसने मन-ही-मन उन्हीं देवों की शरण में जाने का

निश्चय किया। उसने देवों की विधिवत् पूजा की और उनका ध्यान किया।

दमयंती की निष्कपट मानसिक स्तुति से सभी लोक-पाल प्रसन्न हो गये। उन्होंने उसके बुद्धि-कपाट खोल दिये। बस, फिर क्या था। तत्काल उसकी समझ में आ गया कि देवताओं के पलक नहीं गिरते। इन पांचों में जिसके पलक गिर रहे हैं वही राजा नल हैं। इसके अतिरिक्त देवगण भूमि से कुछ ऊपर थे। नल भूमि पर स्थिति थे। देवों पर न धूल थी, न उन्हें पसीना आ रहा था। इसके विपरीत नल धूल और पसीने से युक्त थे। इसी तरह देवों की छाया नहीं पड़ रही थी और नल छायायुक्त थे। बस वह प्रफुल्लित हो उठी। असली नल को पहचानते ही उसने सर्व प्रथम उन चारों लोक-पालों को प्रणाम किया फिर राजा नल के गले में जय-माला डालने आगे बढ़ी, पर लजा गई। देवी सरस्वती ने एक बार फिर देवों से प्रार्थना की वे दमयंती को नल के गले में माला डालने की आज्ञा दें। देवों ने मुस्कराकर आज्ञा दे दी। तब देवी सरस्वती उसे नल के पास ले गई और दमयंती ने अपने सुंदर हाथों से महुए की माला नल के कंठ में पहना दी।

तदनंतर इंद्रादि चारों लोकपाल और सरस्वती अपने

वास्तविक रूप में प्रकट होकर नव-दंपति को आशीर्वाद देते हुए बोले, "हे राजन्, आपने निष्कपट रूप से हमारा जो दौत्य-कार्य किया है, उसके लिए हम आभारी हैं। हम आपको आशीर्वाद देते हैं कि आज से हम आपके यज्ञों में सशरीर प्रत्यक्ष होकर हविष्य ग्रहण करेंगे। आपको हमेशा अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त होगी। आपकी धार्मिक रुचि संकट-काल में भी कम न होवे। जहांपर भी आप चाहें वहां पानी निकल आवे। अग्नि पैदा हो जाय। आप स्वादिष्ट भोजन पका सकें। आपके गले की पुष्प माला सदा नवीन बनी रहे और उसमें से सदा दिव्य-सुगंध आती रहे। हे दमयंती ! हम तुम्हारे दृढ़ अनुराग और अचल-निष्ठा से अत्यंत प्रसन्न हैं। तुम वास्तव में आदर्श पतिव्रता हो। हम तुम्हें आशीर्वाद देते हैं कि जो कोई अन्य पुरुष तुम्हारा सतीत्व भंग करना चाहे, वह तुरंत भस्म हो जाय।" देवी सरस्वती ने नल को चिंतामणि मंत्र भी दिया, जिससे वह कुछ भी पा सकते थे।

इस तरह उन आदर्श-अभिनव-दंपति को आशीर्वाद देकर सरस्वती के साथ चारों लोकपाल स्वर्ग को चले गये। दमयंती का स्वयंवर निर्विघ्न समाप्त हुआ देखकर चारों तरफ हर्ष का पारावार उमड़ने लगा। अनेक

प्रकार के बाजे बजाये जाने लगे। सभी राजा लोग निराश होकर ठंडी सांसें लेते हुए अपने-अपने शिविरों को जाने लगे। जाते हुए राजाओं की दयनीय अवस्था देखकर दमयंती को बड़ी दया आई। उसने अपने पिता राजा भीम से प्रार्थना करके उनके साथ अपनी सखियों का विवाह करा दिया।

इसके बाद प्रसन्न मन से याचकों को बहुत-सा दान देकर राजा नल भी अपने शिविर को चले गये।

: ५ :

सब लोगों के चले जाने के बाद राजा भीम दमयंती के साथ अपने अंतःपुर में गये और अपनी पत्नी को सुखद संवाद सुनाया। उसके अनंतर उन्होंने आज्ञा दी कि विवाह की तैयारी की जाय।

राजाज्ञा प्राप्त होते ही बड़े सजधज के साथ विवाह की तैयारियां होने लगीं। विविध प्रकार के मिष्टान्न बनाये जाने लगे। सारी नगरी मणियों और मोतियों के तोरणों से सजाई जाने लगी। उसे इस प्रकार सजाया गया कि वह स्वर्ग से भी श्रेष्ठ शोभावाली हो गई। नाना प्रकार के बाजे बजने लगे और जन-समूह का कोलाहल दिगंत तक फैल गया। पुरंध्री स्त्रियां दमयंती को स्नान कराकर उसका शृंगार करने लगीं। पूरी

तरह श्रृंगार कर चुकने पर लज्जा के भार से दबी हुई दमयंती ने सर्वप्रथम पिता-माता आदि गुरुजनों और पतिव्रता स्त्रियों को प्रणाम किया तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त किया।

उधर चतुर कलाकार राजा नल का भी श्रृंगार करने लगे। वह अर्जुन की तरह रथ पर चढ़े। गुरुजन व ब्राह्मण उन्हें देखकर बड़े खुश हुए और बरात धीरे-धीरे राजभवन की ओर जाने लगी। पौरांगनाएं अपना-अपना काम छोड़कर झरोखों, अटारियों एवं छतों से दूल्हा नल को देखती हुई उनपर खीलों की वर्षा करने लगीं। नल के अनुपम रूप-लावण्य को देखकर वे सब सुध-बुध खो बैठीं। कुछ देर बाद संभलकर अपने भाग्य की आपस में सराहना करती हुई कहने लगीं, "यह हमारे सौभाग्य का ही फल है कि राजकुमारी ने लोकपालों को छोड़कर नल का वरण किया। नहीं तो हमें कैसे इनके दर्शन मिल पाते।"

यद्यपि सेना आदि के चलने से जो धूल उठती थी उससे अंधकार छा गया था, तथापि राजाओं के मुकुटों में जड़े रत्नों से इतना प्रकाश हुआ कि दीपक व्यर्थ जान पड़ने लगे।

इधर कन्या-पक्ष की ओर से भी स्वागत की बड़ी

तैयारियां हो रही थीं। बारात आ गई है, यह जानकर कुमार दम अगवानी करने आगे बढ़े। विनयपूर्वक सब का यथोचित सत्कार करते हुए वह बरात को राज-प्रासाद में लिवा लाये। तदनंतर शुभ लग्न में वैदिक विधि से नल-दमयंती का पाणिग्रहण संपन्न हुआ। दहेज में राजा भीम ने अनेक अमूल्य रत्न, हाथी, घोड़े, रथ, अस्त्र-शस्त्र एवं सैकड़ों दास-दासियां दीं। फिर राज-कुमार दम ने बरातियों को सुंदरी दासियों और वारां-गनाओं आदि के द्वारा अनेक प्रकार के व्यंजन परसवाये। भोजन करते समय बीच-बीच में सुमधुर परिहास भी होता रहा। नल और दमयंती ने शास्त्र की विधि के अनुसार तीन दिन तक कौतुकागार में ब्रह्मचर्य धारण कर निवास किया।

कई दिन तक आनंदपूर्वक राजा भीम का आतिथ्य स्वीकार कर नल दमयंती को साथ लेकर दलबल के साथ अपनी राजधानी को चलने को तैयार हुए। अपनी इकलौती पुत्री को विदा करते समय राजा भीम और उनकी पत्नी को इतना दुःख नहीं हुआ जितना गुणवान जामाता नल के वियोग से हुआ। राजा उन दोनों को राज्य की सीमा तक पहुंचाने गये। नल के बार-बार लौट जाने का आग्रह करने पर रोते हुए वह दमयंती को

गले लगाकर सामयिक कर्तव्य का उपदेश देने लगे—

"हे पुत्री ! अब ससुराल में पुण्य ही तुम्हारे पिता, क्षमा ही माता, अलोभ ही धन और राजा नल ही सर्वस्व हैं। इस बात का सदैव ध्यान रखती हुई अपने कर्तव्य का पालन करती रहना।" इस तरह बार-बार उपदेश देकर, स्नेह और करुणा के सागर में डूबते-उतराते हुए राजा भीम पुत्री को विदा कर अपने भवन लौट आये। माता-पिता, भाई-बहिन, सखी-सहेलियों की याद से दमयंती का बुरा हाल हो रहा था। वह बार-बार उनकी याद में रोने लगती थी। यह देखकर राजा नल ने प्रेमपूर्वक समझा-बुझाकर उसे शांत किया।

उधर दूत से स्वयंवर-विजयी होकर राजा नल के आने का समाचार जानकर राजधानी में सुख का सागर लहराने लगा। सजी हुई और ऊंचे-ऊंचे भवनोंवाली वह नगरी ऐसे लगती थी जैसे पति के परदेश से लौटने पर स्त्री केश लटकाकर और गर्दन ऊंची करके पति के मार्ग को देखती है। राजा नल के नगर में प्रवेश करते ही कुमारी कन्याओं ने "राजा नल की जय" बोलते हुए उनपर अक्षत और खीलों की वर्षा की। नगर की सभी स्त्रियां भी अपनी-अपनी अटारियों पर चढ़कर नव-दंपति को देखती हुई उनपर खीलों की वर्षा करने

लगीं। इस तरह संमानित होकर राजा नल ने राज-भवन में प्रवेश किया।

इधर इंद्रादि लोकपालों ने स्वर्ग को जाते समय रास्ते में कुछ काले पुरुषों के झुंड को देखा। उस झुंड में से आकर एक व्यक्ति यज्ञ और पूजा-पाठ की निंदा करने लगा। देवताओं ने नास्तिक और महामूर्ख कहकर उसे खूब फटकारा। तब उस पुरुष ने हाथ जोड़कर कहा, "मैं कलियुग का बंदी हूं। उसकी चापलूसी किया करता हूं। तभी मैंने वेदादि की निंदा की। पराधीन जानकर आप मुझे दंड न दें।" उसी समय द्वापर के साथ कलियुग वहां आ गया और अवज्ञापूर्वक कुशल समाचार पूछते हुए दमयंती के स्वयंवर में जाने की इच्छा प्रकट करने लगा। इंद्र ने वहां का सारा हाल सुनाकर कलि को वहां जाने से रोका। परंतु उसपर कोई प्रभाव न पड़ा। देवताओं ने नल को वरदान दिये हैं, यह सुनकर वह और भी क्रुद्ध हो उठा। वह बार-बार नल को राज्य-भ्रष्ट कर दमयंती से अलग करने की प्रतिज्ञा करने लगा।

कलि का यह दुराग्रह देखकर देवराज इंद्र ने नल की बहुत प्रशंसा की और उनके साथ कोई भी अभद्र व्यवहार न करने का आदेश दिया। पर वह तो उल्टा उन्हींका उपहास करने लगा। तब, यह तो माननेवाला

1592

नहीं है, ऐसा सोचकर चारों देवता देवलोक को चले गये और कलि उनकी बात अनसुनी करके राजा नल की राजधानी की ओर चला गया। परंतु नल-दमयंती के अलौकिक तेज से आहत होकर वह उनका कुछ भी अपकार न कर पाया। धर्म-मार्ग पर चलनेवाले व्यक्तियों की उस नगरी में उसका प्रवेश करना भी कठिन हो गया। अंत में उसने एक बहेड़े के पेड़ को देखा। तब वर्षों तक मौके की प्रतीक्षा करता हुआ वह उसी पेड़ पर निवास करता रहा।

और राजा नल विवाह के बाद दमयंती के साथ वर्षों तक सुखपूर्वक राज्य करते रहे। वे नित्य वन, बाग, सरोवर एवं उद्यानों में भ्रमण करते हुए अनेक तरह से जीवन का सुख भोगने लगे।

संस्कृत-साहित्य-सौरभ की पुस्तकें

1. कादंबरी
2. उत्तर-रामचरित
3. वेणी-संहार
4. शकुंतला
5. मृच्छकटिक
6. मुद्राराक्षस
7. नलोदय
8. रघुवंश
9. नागानंद
10. मालविकाग्निमित्र
11. स्वप्नवासवदत्ता
12. हर्ष-चरित
13. किरातार्जुनीय
14. दशकुमार-चरित : भाग १
15. दशकुमार-चरित : भाग २
16. मेघदूत
17. विक्रमोर्वशी
18. मालती-माधव
19. शिशुपाल-वध
20. बुद्ध-चरित
21. कुमार-संभव
22. महावीर-चरित
23. रत्नावली
24. पंचरात्र
25. प्रियदर्शिका
26. वासवदत्ता
27. रावण-वध
28. सौंदरनंद
29. कुंदमाला
30. यशस्तिलक
31. तिलकमंजरी
32. प्रतिमानाटक
33. तीन नाटक
34. नैषध-चरित

मूल्य : प्रत्येक का ३७ नये पैसे

सैंतीस नये पैसे